TEXT FLY
WITHIN THE
BOOK ONLY

UNIVERSAL LIBRARY
OU_182955
UNIVERSAL LIBRARY

OUP—552—7-7-66—10,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 81 | C 49 M Accession No. G.H. 336

Author चतुर्वेदी, मारवनलाल

Title मरण - ज्वार

This book should be returned on or before the date last marked below.

मरण-ज्वार

पं. माखनलाल चतुर्वेदी की
प्रखर राष्ट्रीय कविताओं
का संकलन

संपादन
श्रीकान्त जोशी
अध्यक्ष
हिन्दी-विभाग
श्री नीलकण्ठेश्वर महाविद्यालय, खण्डवा (म. प्र.)

हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
वाराणसी–१.

प्रकाशक
हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
पो. बॉक्स नं. ७०, पिशाचमोचन
वाराणसी–१

●

संस्करण : प्रथम
मार्च : १९६३
मूल्य : २ रु.

●

मुद्रक
विद्यामन्दिर प्रेस (प्रा.) लि.
मानमन्दिर, वाराणसी–१.

प्रवेश

मरण-ज्वार श्रद्धेय दादा पं० माखनलाल चतुर्वेदी की कुछ चुनी हुई राष्ट्रीय एवं सांस्कृतिक कविताओं का संकलन है। राष्ट्र की वर्तमान परिस्थिति को देख कर ही नहीं, अन्य अनेक दृष्टियों से भी यह आवश्यक प्रतीत हुआ कि उनकी कविताओं का एक ऐसा संकलन प्रस्तुत किया जाय।

इन कविताओं के चयन में अन्य अनेक बातों के साथ-साथ इस बात का विशेष ध्यान रखा गया है कि ये कविताएँ अधिकाधिक सरल एवं बोधगम्य हों। सहृदयो के अतिरिक्त आम जन भी इनका रसास्वादन कर सकें और आत्मोत्कर्ष की दैविक ऊँचाई की अनुभूति प्राप्त कर अपने महान् राष्ट्र की गरिमा का साक्षात्कार कर सके।

चतुर्वेदी जी का काव्य-व्यक्तित्व हिन्दी-कविता में अभूतपूर्व रहा है। उनकी देह फूल जैसी कोमल है और उनका हृदय प्रशान्त ज्वालामुखी की तरह विद्रोह और क्रान्ति की ज्वालाओं का अक्षय कोष है। उनके सम्पूर्ण कृतित्व में उनके व्यक्तित्व की इसी विरलता का समन्वय हमे प्राप्त होता है।

पराधीनता के संघर्ष-काल में ब्रिटिश साम्राज्यवाद का खुला विरोध करने-वाले वे प्रथम कवि है। अपनी इस विरोध भावना को छुपाने के लिए न उन्होंने अतीत के परदे में अपने आपको छिपाया, न धर्म की शरण ली, न अनगिनित नियमों तक मे बँधे रहने की विवशताओं को स्वीकर किया और न किसी प्रकार की समझौता-वादी नीति को अंगीकृत किया। ब्रिटिश कारागार की यंत्रणाओं को सहर्ष स्वीकार करते हुए उन्होंने खुले शब्दों में चुनौती दी—

हूँ मोट खींचता लगा पेट पर जूआ
खाली करता हूँ ब्रिटिश अकड़ का कूआ

न कभी वे ब्रिटिश साम्राज्य की चुनौतियों से पराजित हुए और न कभी उन्होंने चुनौती देने के क्षणों से पलायन किया। कारागारों से, काल-कोठरियों से, बेड़ियों और हथकड़ियों की झनझनाहटों से उन्हें एक अजीब इश्क हो गया था। जमानतें और तलाशियाँ तो उनके जीवन की दिनचर्या का अंग ही थीं।

यह सब होते हुए भी माखनलालजी की राष्ट्रीय कविता महज चुनौतियों से निर्मित नहीं है। उनका स्वर चिरन्तन काव्य का स्वर है। व्यापक सांस्कृतिक अन्तर्दृष्टि, वैष्णव समर्पण भावना, और बलिदान की सूक्ष्म भाव-चेतना का वरण कर उन्होंने जिस कविता का सृजन किया है, वह समय का अतिक्रमण करनेवाली अथवा कालजयी तो है ही, अखिल मानवता के लिए अक्षय प्रेरणा का स्रोत भी है। इस दृष्टि से उनकी **पुष्प की अभिलाषा** कविता ही को लें। देश-प्रेम और बलिदान की जो उदात्त भावना इस कविता को चिर-स्मरणीय बनाये हुए है, वह मात्र किसी एक राष्ट्र की भावना नहीं है, न वह किसी सामयिक स्वतंत्रता संग्राम की प्रसूति मात्र है; अपितु वह एक सार्वभौमिक, सार्वकालिक वस्तु है जो अपनी ज्योति से सतत ज्योतिष्मान है। चतुर्वेदीजी, सच तो यह है, हिन्दी की उन विरल विभूतियों में से हैं जिन्होंने अपने स्पर्श से सामयिक को समयातीत बना सकने में अद्‌भुत सफलता प्राप्त की है और जिन्होंने सिद्ध कर दिया है कि कवि और उसकी कविता दो वस्तुएँ नहीं बल्कि एक ही वस्तु के दो नाम है। उनका व्यक्तित्व उनके कृतित्व का परिचायक है और कृतित्व उनके व्यक्तित्व की ही अभिव्यक्ति है।

जिन जीवन-मूल्यों को चतुर्वेदीजी ने स्वीकार किया है, वे स्वतंत्रता के पूर्व हमारी बहुत बड़ी आवश्यकता थे, किन्तु स्वतंत्रता के पश्चात् तो वे हमारे अस्तित्व की अनिवार्यता बन गये है। जिस बलिदानवाद के वे पुरस्कर्त्ता रहे है, उसके अभाव में कोई भी राष्ट्र अपनी स्वतन्त्रता को सुरक्षित कैसे रख सकता है? यही कारण है कि वर्तमान संकट-काल के बहुत वर्षों पूर्व से उनकी कविता में निरन्तर जागृति और निश्शेष समर्पण की, बलिदान और कर्मवाद के अंगीकरण की उद्दाम अभिव्यक्ति मिलती रही है। स्वतन्त्रता के तत्काल पश्चात् अपनी एक विख्यात कविता म उन्होंने स्पष्ट घोषणा की कि यदि भारत को अपनी स्वतन्त्रता को सदा सुरक्षित

रखना है, तो उसे 'रणराता' होना पड़ेगा, पूरब के प्रलयी-पन्थी के रूप में जीवन-पथ को स्वीकार करना होगा और बलि की गौरवमयी परम्पराओं को सतत जीवन देते रहना होगा—

मुक्त गगन है, मुक्त पवन है, मुक्त साँस गरवीली,
लाँघ सात लाँबी सदियों को हुई शृंखला ढीली;
उठ रणराते, ओ बलखाते, विजयी भारतवर्ष,
नक्षत्रों पर बैठे पूर्वज, माप रहे उत्कर्ष;
उठ पूरब के प्रहरी, पश्चिम जाँच रहा घर तेरा,
साबित कर, तेरे घर पहले होता विश्व-सबेरा।

स्वतन्त्रता की प्राप्ति, चतुर्वेदीजी के शब्दों में, कुछ इस प्रकार की है—

चिन्तक, चिन्ताधारा तेरी, आज प्राण पर बैठी,
रे योद्धा ! प्रत्यंचा तेरी, उठ कि बाण पर बैठी।

राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य की चिरन्तन सुरक्षा तभी सम्भव है जब कि —

मिले रक्त से रक्त मने अपना त्यौहार सलोना,
भरा रहे अपनी बलि से माँ की पूजा का दोना।

इसी सकलन की अनेक कविताएँ है, जो माखनलालजी की जागरूक दूरदृष्टि का बहुत बड़ा परिचय देंगी। एक ओर उनकी वाणी निरन्तर अनेक आन्तरिक एवं बाह्य खतरों के प्रति सावधान करती रही है और दूसरी ओर चुनौतियों की झड़ी झेलने का अद्‌भुत बल उपार्जित करती रही है। मानवता के प्रति उनकी आस्था एक क्षण के लिए भी शिथिल नही हुई है। असत् और अविश्वास, युद्ध और अंधकार का सामना करनेवाली शक्तियाँ मानवता ही की शक्तियाँ हैं। उन्ही के शब्दों में—

उठी थी कूक, सहमी थी दिशाएँ,
असम्भव को कहो किस भाँति पाएँ ?
उठा तब मानवी का दूध कस कर,
गगन को बेध बोला यों विहँसकर—

रहे प्रभु मौन में साक्षी हमारा
चलें हम, सूर्य ने हमको पुकारा।

चतुर्वेदीजी ने वैज्ञानिक अनुसन्धानों में भी मानवता के ही उत्कर्ष का साक्षात्कार किया है। 'बलिदान' और 'निर्माण' इन्हीं दो शब्दों में वे मानव, मानवता और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के अस्तित्व को शाश्वत होता हुआ देखते हैं—

बाँधों, सड़कों, निर्माणों में बोल रहे हैं सपने,
ये संकल्प कारखानों के कुछ उनके, कुछ अपने;
आती रहे अनन्त जगत के आनन्दों की बारी,
ढुलती रहे सड़क पर गिट्टी, चुकती रहे उधारी;

ओठों पर शब्दों की महिमा रस्ता रोक खड़ी है,
पूछ रही खेतों में आजादी की यही घड़ी है—
क्या पूरे हो गये तुम्हारे प्राण-दान संकल्प ?
आज विशालों से डरता-सा पूछ रहा है अल्प।

चतुर्वेदीजी की राष्ट्रीय-सांस्कृतिक कविता में ओज और माधुर्य का दुर्लभ समन्वय प्राप्त होता है। ये दोनों पारस्परिक रूप में विरोधी गुण हैं; किन्तु माखनलालजी की कविता में ये अपना चिरन्तन विरोध छोड़ कर हिल-मिल गये हैं। वीर रस को शृंगार रस की ऊँचाई पर प्रतिष्ठित करने का अत्यधिक कठिन कार्य अत्यधिक सहजता के साथ वे कर सके हैं। बन्धनों में बँधे समूचे भारतवर्ष को उन्होंने कृष्ण का जन्मस्थल समझ कर ग्रहण किया था और स्वयं को सम्भवतः उपासिका राधिका के रूप में, जो कृष्ण के हृदय-देश पर उसी तरह प्रतिष्ठिता है, जिस तरह भारत के मध्य भाग में नर्मदा जी तरंगायमान हैं—

जिस दिन रत्नाकर की लहरें
उनके चरण भिगाने आयें,
जिस दिन शैल-शिखरियां उनको
रजत-मुकुट पहनाने आएँ।

लोग कहें मैं चढ़ न सकूँगी
बोझीली, प्रण करती हूँ, सखि,
बनी नमदा में उनके प्राणों में
नित्य लहरती हूँ, सखि !
मैं अपने से डरती हूँ सखि !

माखनलालजी के काव्य की इसी विशिष्टता को लक्षित कर शायद डॉ० नगेन्द्र ने उनके बारे में लिखा है—

"पं० माखनलाल चतुर्वेदी के व्यक्तित्व में मधुर कवि और ओजस्वी सैनिक एक आलिंगन-पाश में आबद्ध हैं, उनमें भावुक नारी और कर्मशील पुरुष का सयोग है ।

:०: :०: :०:

पिछले दिनों देश की उत्तरी सीमा पर भी आक्रामक जघन्यताएँ हुई हैं। उन्होंने एक बार फिर शरीर से टूटते हुए और वर्षों से अस्वस्थ चले आते हुए ७५ वर्षीय माखनलालजी को झकझोर दिया । यह नही कि यह सब उनको आकस्मिक लगा हो। अपनी एक रेडियो वार्ता मे तो उन्होने कहा भी कि "स्वतन्त्रता के १५ वर्ष हम लोगों ने जिस शान्ति और सुरक्षा से बिताए है, वे कम नहीं हैं । हमें तो इस सबके लिए तैयार ही रहना है। जिस देश के तीन तरफ समुद्र लहराता हो; चीन, तिब्बत और कश्मीर जैसी समस्याएँ तथा भूटान नेपाल व सिक्कम की रक्षा जैसे कार्य जिस देश के सामने हों, उस देश की वीरता को नवजागरण ही नहीं, सतत जागरण आवश्यक है।" किन्तु यह होते हुए भी आक्रमण की उन पर अद्‌भुत प्रतिक्रिया हुई है । अस्वस्थता के कारण उनके हाथ काँपते हैं, और दृष्टि से उन्हें दिखाई नहीं देता, अत: डिक्टेशन के सिवाय कोई चारा उनके लिए शेष नही है । अक्टूबर की वह सुबह मैं कभी नहीं भूलूँगा जब उन्होंने मुझसे अपने कमरे में प्रवेश करते ही प्रश्न किया कि, "पेन लाये हो ?" मेरे 'हाँ' कहने पर उन्होंने कहा, "तो चलो लिखो।" उस दिन उन्होंने एक साँस में तीन कविताएँ डिक्टेट कीं, कहीं संशोधन

की आवश्यकता नहीं हुई। इन कविताओं में "बूकों की क्या बात युगों की तरुणाई के दिन आये हैं!" (पृष्ठ ५१) पंक्ति से आरम्भ होनेवाली कविता—धर्मयुग में प्रकाशित होने के साथ ही समस्त भारतवर्ष का कण्ठहार बन गई। जाने कितने पत्रों ने उसे उद्धृत किया, कितने ही समारोहों में उसका सस्वर पाठ किया गया। हिन्दी की विख्यात कवयित्री सुश्री महादेवी वर्मा ने ३०-३१ जनवरी '६३ को सम्पन्न हुए भारतीय लेखक सम्मेलन में सम्मिलित होने का आग्रह करते हुए जब एक पत्र पूज्य दादा को भी दिनांक २४ फरवरी को लिखा, तो उन्होंने उसमें इसी कविता की चर्चा की। पूज्य दादा के काव्य-व्यक्तित्व को समझने के लिए पूरा पत्र उद्धृत करना अनुचित न होगा। उन्होंने लिखा—

मान्य भाई

जय भारत !

आपका समाचार कभी-कभी मिल ही जाता है। भारत के संकट ने 'भारतीय आत्मा' को इतना स्पर्श न किया होता तो आश्चर्य था। 'युगों की तरुणाई के दिन आए हैं' यह समाचार हमारे थके साहित्यकारों के कण्ठ में तरुणाई ला सके तो बड़ा काम हो।

हम लोग ३०-३१ जनवरी को भारतीय लेखक-सम्मेलन कर रहे हैं। अनायास हमें बापू का बलिदान दिवस और निराला की जन्म-तिथि (वसन्त पंचमी) एक ही समय मिल गये। आप का स्वास्थ्य कैसी स्थिति में है, यह ज्ञात नहीं, अन्यथा आने का हठ करती। आपने तो फूल में अंगारा पाल रखा है। पता नहीं किस में अधिक बल है। कठिनाई यह है कि हमें दोनों का एक साथ अनुभव होता रहता है, अतः किसी की विशेषता को भूलने का अवकाश नहीं मिलता। आ सकें, तो वातानुकूलित कक्ष में आने की व्यवस्था की जा सकती है। प्रयाग में तब तक शीत कम हो जायेगी। यहाँ कोई असुविधा नहीं होगी।

उत्तर की प्रतीक्षा रहेगी।—

शुभेच्छुका बहन

महादेवी

:०: :०: :०:

आशा है, प्रस्तुत संकलन पाठकों को रुचिकर प्रतीत होगा। मानवता के प्रति आस्था की ज्योति जागृत करने में, स्वतन्त्रता की सुरक्षा के लिए बलिदान का वेद-मंत्र उच्चारित करने में, राष्ट्रीय गौरव और सांस्कृतिक ऊँचाइयों की अनुभूति प्राप्त करने में और सम्पूर्ण भारतवर्ष की सुरक्षा के लिए जन-जन के योद्धा को उद्दीप्त करने में माखनलालजी की वाणी अपनी प्रभविष्णुता सिद्ध करेगी।

गुरुवार, दिनांक २१. ३. '६३
जवाहरगंज, खण्डवा

श्रीकान्त जोशी

अनुक्रम

शीर्षक	पृ.सं.
१. पुष्प की अभिलाषा	... १५
२. वृक्ष की अभिलाषा	... १६
३. उठ महाप्राण	... १७
४. जवानी	... १८
५. अचल ईमान	... २२
६. झंकार कर दो	.. २४
७. उट्ठो शीश हथेली पर लो	... २५
८. युगधनी	... २७
९. राष्ट्रीय झंडे की भेंट	... २८
१०. रक्तवाहिनी से	... ३१
११. २६ जनवरी	... ३३
१२. रणवेदी पर : बलिवेदी पर	... ३५
१३. जय जय भावमयी छवि वाणी	... ३६
१४. आजादी पर	... ३८
१५. सूर्य की पुकार	... ४१
१६. मुक्त गगन है : मुक्त पवन है	... ४३
१७. नव-स्वागत	... ४५
१८. उठ ओ युग की अमर साँस	... ४६
१९. युग-पुरुष से	... ४८
२०. मुक्तक	... ५०
२१. चलो सजाओ सैन्य	.. ५१
२२. आज चीन को मज़ा चखा दें	... ५२
२३. बहने दो बलिपंथी धारा	... ५३
२४. सीमा ढूँढ़ रही	... ५४
२५. मेरा है हिमशैल	... ५५
२६. मैं हूँ एक सिपाही	... ६०
२७. रचो बलिपथ सुहाने	... ६३
२८. चले समर्पण आगे-आगे	... ६६
२९. प्यारे भारत देश	... ६७
३०. मरण-ज्वार	... ६९
३१. सिपाहिनी	... ७१
३२. गांधी : विनोबा	... ७३
३३. हाज़िर प्राण हमारा	... ७८

——:o:——

मरण - ज्वार

पुष्प की अभिलाषा

●

चाह नहीं, मैं सुरबाला के गहनों में गूँथा जाऊँ,
चाह नहीं, प्रेमी माला में बिंध प्यारी को ललचाऊँ।
चाह नहीं, सम्राटों के शव पर हे हरि! डाला जाऊँ,
चाह नहीं, देवों के सिर पर चढ़ूँ भाग्य पर इठलाऊँ।

मुझे तोड़ लेना वनमाली।
उस पथ में तुम देना फेंक॥
मातृ-भूमि पर शीश चढाने।
जिस पथ जावें वीर अनेक॥

१८ फरवरी, १९२२

वृक्ष की अभिलाषा

●

गौरव शिखरो नहीं, समय की मिट्टी में मिलवाओ।
फिर विंध्या के मस्तक से करुणा-घन हो, झर लाओ।।
पृथिवी के आकर्षण के प्रतिकूल उठूँ, दिन लाओ।
जल से प्रथम मुझे आतप की किरणों में नहलाओ।।

कई गुना होकर अर्पित।
यह मिट्टी में मिल जाना।।
हरियाला मस्ताना दाना।
कहे कि तुझको जाना।।

१९२२

उठ महाप्राण

●

उठ कोटि-कोटि के महाप्राण !
सृजन - प्रलय पर
ताण्डव लय पर
कर कूजित नव वेद-गान ।
उठ कोटि-कोटि के महाप्राण ।।

उठ तरल विमल लय भरी साँस में—
धनुर्धीर तू कर निवास
जी उठें भूमि के खण्ड-खण्ड
गर्वित दीखे एशिया खण्ड,

असि के सपनों के आर-पार
बह रहे सतत् स्वातंत्र्य-धार ।
शिर हो चिन्तन का सामगान,
उर हो बलिदानों का प्रमाण !
उठ कोटि-कोटि के महाप्राण !!

जवानी

●

प्राण अन्तर में लिए, पागल जवानी
कौन कहता है कि तू
विधवा हुई, खो आज पानी ?

चल रहीं घड़ियाँ,
चले नभ के सितारे,
चल रहीं नदियाँ,
चले हिम-खंड प्यारे,
चल रही है साँस,
फिर तू ठहर जाये ?
दो सदी पीछे कि,
तेरी लहर जाये ?

पहन ले नरमुण्ड-माला,
उठ, स्वमुंड सुमेरु कर ले,
भूमि-सा तू पहन बाना आज धानी,
प्राण तेरे साथ हैं, उठ री जवानी ।

द्वार बलि का खोल,
चल, भूडोल कर दें,
एक हिमगिरि एक सिर
का मोल कर दें,

मसल कर, अपने,
इरादों सी उठा कर,
दो हथेली है कि,
पृथ्वी गोल कर दें,

रक्त है या है नसों में क्षुद्र पानी,
जाँचकर, तू सीस दे देकर जवानी।

वह कली के गर्भ से फल-
रूप में, अरमान आया,
देख तो मीठा इरादा, किस
तरह सिर तान आया,
डालियों ने भूमि रुख लटका
दिये फल, देख आली,
मस्तकों को दे रही
संकेत कैसे, वृक्ष-डाली !

फल दिये या सर दिये तरु की कहानी,
गूँथकर युग में, बताती चल जवानी।

श्वान के सिर हो
चरण तो चाटता है,
भौंक ले क्या सिंह
को वह डाँटता है ?
रोटियाँ खायीं कि
साहस खा चुका है,
प्राणि हो पर प्राण से
वह जा चुका है।

तुम न खला ग्राम-सिंहा म भवानी
विश्व की अभिमान मस्तानी जवानी।
ये न मग हैं, तव
चरण की रेखियाँ हैं,
बलि-दिशा की अमर
देखा-देखियाँ हैं
विश्व पर पद से लिखे
कृति-लेख हैं, ये,
धरा-तीर्थों की दिशा
की मेख हैं ये।

प्राण-रेखा खींच दें उठ बोल रानी,
री मरण के मोल की चढ़ती जवानी!

टूटता जुड़ता समय
भूगोल आया,
गोद में मणियाँ
समेट खगोल आया,
क्या जले बारूद
हिम के प्राण पाये,
क्या मिला जो प्रलय
के सपने न आये?
धरा यह तरबूज
है, दो फाँक कर दे।

चढ़ा दे स्वातंत्र्य-प्रभु पर अमर पानी,
विश्व माने तू जवानी है, जवानी।

लाल चेहरा है नहीं
फिर लाल किसके ?
लाल खून नहीं
अरे कंकाल किसके ?
प्रेरणा सोयी कि
आटा - दाल किसके
सिर न चढ़ पाया
कि छापा - भाल किसके

वेद की वाणी कि हो आकाश-वाणी,
धूल है जो जग नहीं पायी जवानी।

विश्व है असि का,
नहीं संकल्प का है,
हर प्रलय का कोण
काया - कल्प का है,
फूल गिरते, शूल
शिर ऊँचा लिये हैं,
रसों के अभिमान
को नीरस किये हैं।

खून हो जाए न तेरा देख पानी,
मरण का त्योहार, जीवन की जवानी।

अचल ईमान

चरण चलें, ईमान अचल हो !

जब बलि रक्त-बिन्दु-निधि माँगे
पीछे पलक, शीश कर आगे,
सौ-सौ युग अँगुली पर जागे
चुम्बन सूली को अनुरागे।

जय कश्मीर हमारा बल हो !
चरण चलें, ईमान अचल हो !!

स्वयं वरण कर हिमगिरि का रथ,
तुम्हें पुकार रहा सागर-पथ,
अणु से कहो अमर हैं निर्भय
बोल मूर्ख, मानवता की जय !

झण्डा है अभिमान, सबल हो !
चरण चलें, ईमान अचल हो !!

अन्न और असि दो से न्यारा,
गर्वित है भूदान हमारा,
सुन उस पंथी की स्वर-धारा
जिसने भारतवर्ष सँवारा।

'गोली' राजघाट का बल हो !
चरण चलें, ईमान अचल हो !!

बलि, कृति, कला 'त्रिवेणी' की छवि,
गूँथ रहा, अपनी किरणों रवि,
उठती तरुणाई का वैभव
उतरे, बने सन्त, योद्धा, कवि

भारत-लोक अमर उज्ज्वल हो !
चरण बढ़ें, ईमान अचल हो !!

१९५०

झंकार कर दो

वह मरा कश्मीर के हिम-शिखर पर जाकर सिपाही
बिस्तरे की लाश ! तेरा और उसका साम्य क्या ?
पीढ़ियों-पर-पीढ़ियाँ उठ आज उसका गान करतीं,
घाटियों पगडंडियों से नित नई पहचान करतीं,
खाइयाँ हैं, खंदकें हैं, ज़ोर है, बल है भुजा में,
पाँव हैं मेरे, नई राहें बनाते जा रहे हैं !
यह पताका है
उलझती है, सुलझती जा रही है,
जिन्दगी है यह,
कि अपना मार्ग आप बना रही है !
मौत लेकर मुट्ठियों में, राक्षसों पर टूटता हूँ,
मैं, स्वयं मैं, आज यमुना की सलोनी बाँसुरी हूँ,
पीढ़ियाँ मेरी भुजाओं कर रहीं विश्राम साथी,
कृषक मेरे भुज-बलों पर कर रहे हैं काम साथी,
कारखाने चल रहे हैं, रक्षिणी मेरी भुजा है,
कला-संस्कृति-रक्षिता, लड़ती हुई मेरी भुजा है !
उठो बहिना,
आज राखी बाँध दो श्रृंगार कर दो,
उठो तलवारो,
कि राखी बँध गई, झंकार कर दो ।

१९५४

उट्ठो शीश हथेली पर लो

●

बौर - बौर उट्ठी तरुणाई,
घायल सपने चढ़ चढ़ आये,
ठौर - ठौर बलिदान - कुंज में
इसने अपने प्राण जुड़ाये !

अपनी गर्म - गर्म साँसों से
जी में ठंडक सी बरसाती,
चढ़ - चढ़ आई नई जवानी
मिटने की गलियों बल खाती।

वृन्दावन बस यहीं लहरता,
औ' विहार कर रहा वेणु-स्वर,
यमुना यहीं प्रगट होती है
इसी गोद में, इसी शिखर पर।

यहीं कहीं हर लेता कोई
वीर, जल्पनाएँ बाधा की,
यहीं चरण मिलते माधव के
यहीं छाँह मिलती राधा की।

इस बलिदान - देश - राजा का
इसे मुकुट कहते हैं रानी,
सुनी बहुत अपनायी थोड़ी
बनो प्राण दे नई कहानी।

आशाएँ आकाश चूम लें,
पंछी घूमें मगन गगन में,
उट्ठो शीश हथेली पर लो
जगें पीढ़ियाँ चगन-मगन में!

किसने कहा जिरह-बख्तर दो
संजीवनी साध लाये हैं,
किये विशाल क्षुद्र को हम तो
सिर से कफन बाँध लाए हैं।

अन्तर के अंधड़ को बाँधे,
बाहर बलि का गान सजाए,
भावों के रंगों रंगों को
बलि का शीश-मुकुट पहनाये।

इन्हीं दिनों तरुणाई तेरी
याद सागरों तक बढ़ आई,
रोके कौन कि सिर पर काबू
बौर-बौर उट्ठी तरुणाई!!

१९६०

युग धनी

●

युग-धनी ! निश्चल खड़ा रह ।

जब तुम्हारा मान, प्राणों तक चढ़ा, युग-प्राण लेकर,
यज्ञ-वेदी फल उठी जब अग्नि के अभिमान लेकर,
आज जागा कोटि कंठों का बटोही मान लेकर,
ढूँढ़ने आ गई बन्धन-मुक्ति-पथ पहचान लेकर,

जब कि उर्मि उठी, हृदय-ह्रद मस्त होकर लहलहाया,
रात जाने से बहुत पहले सबेरा कसमसाया,
किन्तु हम भूले तुझे ही, जब हमें रण-ज्वार आया
एक हमने शंख फूँका, एक हमने गीत गाया !

गान तेरा है कि बस अभिमान मेरा,
रूप तेरा है कि है दृग-दान मेरा
तू महान प्रहार ही सह ।
युग - धनी निश्चल खड़ा रह ।।

१९४०

राष्ट्रीय झण्डे की भेंट

●

माँ, रोवे मत शीघ्र लौट
घर आऊँगा प्रस्थान करूँ,
बाबा दो आशीश, पताका
पर सब कुछ कुरबान करूँ।
लौटूँगा मैं देवि, हाथ में
विजय - पताका लाऊँगा,
कष्ट, प्रवास, जेल जीवन की
तुमको कथा सुनाऊँगा ।

दौड़ पड़ो वीरो, माता ने
संकट में की आज पुकार,
हार न होवे तेरे रहते
मेरी पावन भूमि बिहार।
ले झण्डा चल पड़ा, प्राण
का मोह छोड़ वह तरुण युवा,
उसकी गति पर अहा देश के
अमरों को भी क्षोभ हुआ।

सजा हुई, जंजीरें पहनीं,
दुर्बल था, पर वार हुए,
गिट्टी, मोट, चक्कियाँ, कोल्हू
हँस-हँस कर स्वीकार हुए।

मातृभूमि में तेरी मूरत
देख सभी सह जाऊँगा,
दे लें दण्ड आर्य बालक हूँ
मस्तक नहीं झुकाऊँगा।

कष्ट बढ़े, दुर्बल देही थी
असहनीय व्यवहार हुआ,
कैदी शैया पर पड़ने को
गिर पड़ कर लाचार हुआ।
हुंकारा हरदेव[1], प्राण में दूँगा
लो तैयार हुआ!

"माफी ले ले अभी, समय है"
अरे न यों अपमान करो,
झण्डे पर चढ़ने दो मुझको
मातृभूमि का ध्यान करो।

प्यारी माँ, मेरे बाबा,
हरदेवा अन्तर्धान हुआ,
रक्षक हा भगवान, प्रिये
में झण्डे पर कुर्बान हुआ।

---

१. श्री हरदेवनारायण सिंह बिहार के सत्याग्रही थे। सन् १९२३ के नागपुर झण्डा-सत्याग्रह में आय थे। जिस दिन अखिल भारतीय राष्ट्र समिति के प्रतिनिधि स्वर्गीय सरदार पटेल नागपुर की एक सभा में कह रहे थे कि अभी तक झण्डे पर कोई मरा नहीं, उसी समय नागपुर जेल में हरदेवजी प्राण दे रहे थे। श्री वल्लभ भाई, लेखक और अनेक देश-भक्तों के कन्धों पर हरदेव की अर्थी झण्डों का कफन ओढ़ सहस्रों की जनता के साथ निकली और सुनहला इतिहास बन गयी।

जननि बिहार प्रणाम तुम्हें
तेरे गौरव का गान रहे,
मातृभूमि तेरे ध्वज की
मेरे प्राणों से शान रहे।

क्यों सहसा चल पड़ा
ठहर, आ रही विजय तेरे द्वारे,
'कन्धे पर ले चलें या कि
चल पड़ें पूज्य पथ में प्यारे?'

रक्त-वाहिनी से

●

भुजदण्डों की रक्त-वाहिनी उठ कि सम्हलकर देख,
मेंहदी-सा अपने यौवन को कुचल-कुचल कर देख,
उठ आएँ जी में अनबोली ज्वारों के आवेग
पतवारों-सा बीच धार को चीर कि चल कर देख!

:o:

क्या छलता है संगी, रंगी क्या छल-छल कर देखे,
ईमानों के प्रश्न-चिह्न उठ, पंथी छल कर देखे,
कैसा अपना, कौन पराया, क्या ममता, क्या माया
पेशानी पर निश्चय लिख कर दूर निकल कर देख!

:o:

फूलों-सा ऊँचा उठ, भू से नभमंडल की ओर
ओस-कणों-सा मातृ-भूमि पर-पल पल ढल कर देख,
तू प्रलयंकर, अरे दिगम्बर, छोड़ सुरसरी धारा
जग में अमृत बाँट, हालाहल स्वयं निगल कर देख!

:o:

टपक-टपक प्राणों के रस तू बलि की मीठी राह,
चाह कभी होने मत पाये उनके उर की दाह,
क्षण बनती, क्षण मिटती चाहों का कितना-सा मोल
विकल साँप से बोल कि मेरी वंशी के स्वर डोल!

:o:

ओ ईमान, प्रलय के संगी, बन न प्रणय भर साथ
कोटि भुजाओं का रथ रोकें मेंहदी वाले हाथ ?
आग उगलती हो दुनियाँ, तू देख मना मत पर्व,
मिट जाने की ढण्डी ताकत का चढ़ने दे गर्व !

:o:

तुझे लगाना है दुनियाँ की पतन-रेख पर मेख,
भुजदण्डों की रक्त-वाहिनी उठ कि सम्हलकर देख ! !

१९६०

२६ जनवरी

●

तेरे आने पर मनता है भारत में आनन्द,
ओ बलिदान-काव्य के मधुरिम आजादी के छन्द।

ये विद्रोही, हरे-हरे पौधे अनाज के उठकर,
कहते हैं हमने सीखा जीना वसुधा पर लुटकर।

यह पार्वती और यह शंकर, हिमिगिरि से बल देकर,
करते हैं अभिषेक देश का गंगा का जल लेकर।

ओ उन्नत गिरिशृंगो देखो, भारत के सिर ऊँचे,
चला आ रहा बलि-दल ले स्वातंत्र्य-पंथ दृग मींचें।

लाल, बाल और पाल सँवारे, मोहन का स्वर लेकर,
देश खड़ा आरती उतारे आजादी वर लेकर।

धौरी, धूमरिया, योगिनियाँ गायें मचल पड़ी हैं,
मेरे दूधों आजादी ले आई अमृत-झड़ी हैं।

हिमगिरि! हिन्द महासागर तक खींच गर्व की रेखा,
और कच्छ से बंग जननि तक लगा भाग्य का लेखा।

तिरबेनी, तापती, नर्मदा, कृष्णा बोलें बोली,
माँ के बंधन की ज़ंजीरें किसने किस विधि खोलीं!

जयतु हिमालय मुकुट कि जिसपर हों अभिषेक गगन के,
हिन्द महासागर की जय, धोता है घाव चरण के।

गंगा, यमुना की जय जय, जो बन माता का हार,
काबेरी, नर्मदा और कृष्णा को रही पुकार।
जयति शृंग अरवली, विंध्य, सतपुड़ा, अमर सह्याद्री,
जयति नीलगिरि, उत्तर, दक्षिण, पूरब, पश्चिम साधी।
जय बाजरा, जुवार, धान, गेहूँ, मकई धन मेरा,
तारों भरी साँझ जय, जय है सूरज सुभग सबेरा।
लाल किले पर उड़ते अमर तिरंगे तेरी जय हो!
भारत की पीढ़ियाँ बढ़ रहीं उनकी देव विजय हो!!

१९५६

रणवेदी पर : बलिवेदी पर

हम भी कुछ करते रहते हैं, उस बबूल की छाँव में,
हम भी श्रम के गीत सुनाते हैं ढोलक पर गाँव में।

हममें भी आ गई हरारत, बजी आज शहनाई है,
केरल से कश्मीर तलक हम हैं, हम भाई-भाई हैं।

कावेरी, कृष्णा कि नर्मदा, गंगा, यमुना, सिन्धु रहे,
हमें न तोड़ सकेगा कोई, हम माँ-जाए बंधु रहे

चरण-चरण चल पड़ी मातृ-भू, वरण-वरण संतान लिए,
हैं चालीस करोड़ कि उनका अमित उचित अभिमान लिए।

वेदों की अर्चना, तपों की धुन, गीता का गान लिए,
जी में प्रभु को लिए, शीश पर आजादी का मान लिए।

रण-वेदी पर, बलि-वेदी पर, श्रम-वेदी पर, जहाँ रहें,
लेकर शीश हथेली पर उठ आये, बोलो कहाँ रहें ?

१९५८

जय जय भावमयी छवि वाणी !

जय जय भावमयी छवि-वाणी,
रस-अणिमा, रस-महिमा, रसना,
रस-गरिमा कल्याणी !
भावमयी छवि-वाणी !!

जब व्याकुल हो उठी
कलह-संकुल मानव की बोली,
जब अहरह गीर्वाणी
हो आई प्रतिभा अनमोली;
तब तेरे एकान्त देश से
बोल-बोल सौ बात,
उमड़ पड़ा दुनियाँ में
अर्थों का नव-झंझावात;
उठ अभाव ने भाव दे दिय
भर खेतों में पानी !
जय-जय भावमयी छवि-वाणी...!!

बेलों चढ़ी, बूँद पर उतरी,
तू स्वर-स्वर में पैठी,
चाहा-सा सुर देने के हित
तूने बीन उमैठी,

झंकृति से कृतियाँ बन उट्ठीं,
गूँज उठी दिशि-दिशि में,
तेरी स्वर-सुषमा भर आई
रवि-किरणों में, निशि में;
पढ़ने, गुनने, गढ़ने की,
बन आई स्वर्ग-निशानी !
भावमयी छवि - वाणी ! !

तू ईसा से बातें करती
महावीर से बोल,
बुद्ध और नानक से अपने
जी की घुण्डी खोल;
प्रतिभा की पुरुषार्थ देवता
अर्पण की अधिरानी,
रंगों में स्वर, स्वर में महिमा,
भरती सी गीर्वाणी;
जय - जय भावमयी छबि - वाणी ! !

उठ-उठ जग के स्वर में रंगिणि,
नित प्रकाश पो-पो कर,
खेतों, खलिहानों, गिरि, वन में,
नित मौलिकता बो कर;
उठ प्रभुत्व की क्षमा कि उठ तू,
भाव भरी कल्याणी,
बागों में फूली, खेतों में
भूली - सी अभिमानी
उठ-उठ उतर कि आशाओं में
अभिमत भरी कहानी !
जय-जय भावमयी छवि-वाणी ! !

आजादी पर

●

हिमगिरि शिखर ओढ़कर बैठे धूएँदार दुशाले,
नदियों में अस्तित्व खो रहे जहाँ समर्पित नाले;
नगर जहाँ श्रद्धा से नत हैं, गाँव हर्ष में फूला,
वृक्षों ने डाला है डालों, पक्षी दल का झूला;
खेतों में फसलें हँस उट्ठीं, चौपालों पर बच्चे,
बन्दर तोड़-तोड़ फल खाते कुछ पक्के कुछ कच्चे;
जहाँ सुहागन बनी वृक्ष पर बेलें खेल रही हैं,
गलियों-गलियों गले-गले आनन्द ढकेल रही हैं;
खेतों की रखवाली है पागों के पेंच सँभाले,
है श्रम की रखवाली ही, बाहों में झूले डाले;
झोपड़ियाँ निहाल हैं, महलों में झोपड़ियाँ चमकें,
बरस रहा गंगा-जल शिव के शिर पर प्रिय थम-थम के।

:०:

सीमा के उस ओर हमारे पहरे डोल रहे हैं,
शक्ति और संयम के उलझे बंधन खोल रहे हैं;
सिर पर प्रलय, नेत्र में मस्ती, मुट्ठी में मनचाही,
किसका भय है, दासी हैं ये वाही और तबाही;
बापू की यादों पर सपने धो-धो कर युग-नारी,
बाँट रही है त्यागों की सौगातें बे-मनुहारी;

किसका प्राण-गैरहाज़िर है, गौरव तो हाज़िर है,
आज बच्चियाँ परम गर्विता, बच्चे खूब निडर हैं;
हृदयों के गुलदस्ते ले, नर-नारी बूढ़े बच्चे,
चले जा रहे प्राणदान पर, बने देश-हित सच्चे।

:o:

हवन-कुंड में जीवन-समिधा पड़ती दीख रही है,
आज पीढ़ि यह बलि-पंथी से स्वागत सीख रही है;
सेवाएँ स्वर माँग रही हैं, अगणित अंगों को लेकर,
माला गूँथ रही मालनियाँ अगणित रंगों को लेकर;
वेद और कुरआन बोलते, बाइबल बोल उठा है,
गुरुद्वारा उठ-उठ आया, कितना रस घोल उठा है;
जिन्दावस्ता आज सँजोता दीयों की अगियारी,
चहक उठे पंखेरू हँस कर उठा रही सर क्यारी;
काँचों में, कांचन मणियों में बलि की होड़ें होंगी,
अदा-बिदा में बलिदानों की सुन्दर जोड़ें होंगी।
करती है अभिषेक चाव से मेरी गंगा-जमनी,
उड़ा ध्वजा तुम, आज जगत पर तेरी धाकें जमनी;
उन्नति आजादी के द्वारों पर करती पहुनाई,
कहाँ रही यह भूमि श्रमों ने किस ढब कृतियाँ ढाईं;
कृष्णा के संतों ने कावेरी की धारों जाकर,
आज नर्मदा के कलकल में विमल ज्योति पहनाकर;
भारत की करधनी बनी, झकझोर पुकार उठी है,
नीलगिरी की शिखरणियाँ तन मन सब वार उठी हैं;

बलिदानों, बलिग्रंथों में रस सीता बोल रही है,
शृंगारो, अर्चना करो बलि-बहना बोल रही है।
पल्लव-पल्लव में ऊगी हैं साधें उर अंतर की
फूली फली गिरी भूमी पर बन महरानी स्वर की
चरण धो रहा सागर खाकर नित-नित नई पछाड़ें
अब स्वतंत्रता विहँस उठेगी सुन बली की चिघाड़ें।

:०:

बाँधों, सड़कों, निर्माणों में बोल रहे हैं सपने,
ये संकल्प कारखानों के कुछ उनके कुछ अपने;
आती रहे अनन्त जगत के आनन्दों की बारी
ढुलती रहे सड़क पर गिट्टी चुकती रहे उधारी,
ओठों पर शब्दों की महिमा रस्ता रोक खड़ी है,
पूछ रही खेतों में आजादी की यही घड़ी है;
क्या पूरे हो गए तुम्हारे प्राणदान संकल्प,
आज विशालों से डरता सा पूछ रहा है अल्प।
स्वर में और सुरा में छिड़ती रोज व्यंग्य की जंग,
क्या श्रम की प्रतिमाओं का ऐसा ही होता रंग?
आज प्रणय, कर्त्तव्यवान है कुण्ठा आज विरत है,
कोटि-कोटि की भाग्य-देवता आजादी पर नत है।

सूर्य की पुकार

●

समय को बाँध लें निज नयन खोलें,
रसा के शिखर से जलधार ढोलें,
चलें ये निम्नगाएँ मंदाकिनी सी,
सहस्र धार दौड़ें गिनी अनगिनी सी,
हिमाचल जब पुकारे शीश बो दें,
सहस्रों में हमारा सिर पिरों दें।
गगन चक्करों के कहाँ कब ठिकाने,
धरा में बो रहा कोई निशाने,
कभी बरसे, कभी सरसे रँगीला,
उसे, इस ओर या उस ओर जाने,
चली गंगा अनगिनत रूप धारे,
कहीं मिल जाएँ कृष्णा के किनारे,
भुवन-मनमोहिनी ब्रज बाँसुरी को,
मृदंगम आंध्र की बज कर सँवारे,
मिले आरोह से अवरोह की लय,
कहे ब्रह्माण्ड हिन्दुस्तान की जय।
कहा कवि ने तुम्हारे ये पसीने,
सुशोभित हों धरा के बन नगीने,
हिमालय से बरस उट्ठे धरा पर,
हृदय हिलकोरियाँ ले गीत गाकर,

बनेंगे तीर्थ, यात्राएँ सफल हैं,
इन्हें जी से लगा लो, श्रेष्ठ बल हैं,
उगेंगी खेत में हरियालियाँ जब,
नयन की भर उठेंगी प्यालियाँ जब,
तभी दानें उठेंगे, प्राण होगा,
तभी सौभाग्य का फलदान होगा।

भुजाएँ तन उठीं टीके लगे हैं,
जगी हैं झोपड़ियाँ, घर जगे हैं,
व्रणों को प्रकृति के जिस दिन कुरेदा,
उठा मानव, गगन को विहँस छेदा,
विधाता हँस उठा कैसी पराजय,
उठो बेटा, तुम्हें किस दैत्य का भय?

गगन में सरसराती है हथेली,
धरा की मार है कितनी नवेली,
हिला कर विश्व-गरिमा उभय काँधे,
जवानी देखती है, हाथ बाँधे,
कणों में, इन तृणों में, उन क्षणों में,
धरा करुणामयी के कुछ व्रणों में,
उठी थी दूख, सहमीं थी दिशाएँ,
असम्भव को कहो जिस भाँति पाएँ!

उठा तब मानवी का दूध कसकर,
गगन को बेध बोला यों बिहँसकर,
रहे प्रभु मौन में साक्षी हमारा,
चलें हम, सूर्य ने हम को पुकारा!

मुक्त गगन है : मुक्त पवन है

●

मुक्त गगन है, मुक्त पवन है, मुक्त साँस गरवीली,
लाँघ सात लाँबी सदियों को हुई शृंखला ढीली।

उठ रणराते, ओ बलखाते, विजयी भारतवर्ष,
नक्षत्रों पर बैठे पूर्वज, माप रहे उत्कर्ष।

ओ पूरब के प्रलयी पंथी, ओ जग के सेनानी,
होने दे भूकम्प कि तूने, आज भृकुटियाँ - तानीं।

:०:

तीन तरफ सागर की लहरें जिसका बने बसेरा,
पतवारों पर नियति सजाती जिसका साँझ - सबेरा।

बनती हो मल्लाह मुट्ठियाँ सतत भाग्य की रेखा,
रतनाकर रतनों का देता हो टकराकर लेखा।

उस लहरीले घर के झंडे
देश - देश में लहरें !

उठता हो आकाश, हिमालय दिव्य द्वार हो अपना,
सागर हो विजयिनि माँ तेरा उस परसों का सपना।

चिन्तक, चिन्ताधारा तेरी आज प्राण पा बैठी,
रे योद्धा प्रत्यंचा तेरी उठ कि बाण पर बैठी।

मिले रक्त से रक्त, मने अपना त्योहार सलोना,
भरा रहे अपनी बलि से माँ की पूजा का दोना ।

:o:

हो नन्हीं दुनियाँ के हाथों कोटि-कोटि जयमाला.
मस्तक पर दायित्व, हृदय में वज्र, दृगों में ज्वाला ।

तीस करोड़ धड़ों पर गर्वित, उठे तने ये सिर हैं,
तुम संकेत करो कि हथेली पर शत-शत हाजिर हैं ।

नव-स्वागत

तुम बढ़ते ही चले, मृदुलतर,
जीवन की घड़ियाँ भूले,
काठ छेदने लगे सहस—
दल की नव पंखड़ियाँ भूले।

मन्द पवन संदेश दे रहा
हृदय-कली पथ हेर रही,
उड़ो मधुप, नन्दन की दिशि में
ज्वालाएँ घर घेर रहीं।

तरुण तपस्वी आ तेरा
कुटिया में नव-स्वागत होगा,
दोषी तेरे चरणों पर फिर
मेरा मस्तक नत होगा...।

उठ ओ युग की अमर साँस

●

उठ-उठ तू ओ तपी, तपोमय जग उज्ज्वल कर,
गूँजे तेरी गिरा कोटि भवनों में घर-घर।

गौरव का तू मुकुट पहिन
युग के कर-पल्लव,
तेरा पौरुष जगे, राष्ट्र
हो उन्नत अभिनव।

तेरे कंधों लहरावे, प्रतिभा की खेती,
तेरे हाथों चले नाव, जग-संकट खेती।
तुझ पर पागल बने आज उन्मत्त ज़माना,
तेरे हाथों बुने सफलता ताना-बाना।

तू युग की हुंकार,
अमर जीवन की वाणी,
तेरी साँसें अमर हो उठें,
युग-कल्याणी।

तेरा पहरेदार विन्ध्य का दक्षिण-उत्तर,
तेरी ही गर्जना, नर्मदा का कोमल स्वर।
तेरी जीवित साँस आज तुलसी की भाषा,
तेरा पौरुष सतत अमर जीवन की आशा।

जाग-जाग उठ तपी, तुझे
जग का आमंत्रण,
विभु दे तुझको उठा
सौंप कर अमृत के कण।

तेरी कृति पर सजे हिमालय रजत-मुकुट-सा,
सिन्धु, इरावति बने सुहावन वैभव-घट सा,
गंगा, यमुना बनें तुम्हारी उर-माला सी,
विहरित हरित स्वदेश करें, कृषि जन कमला-सी।

कमर बंद नर्मदा बने
उठ सेना-नायक,
शस्त्र-सज्जिता तरल तापती,
बने सहायक।

तेरी असि-सी लटक चलें कृष्णा कावेरी,
आज सृजन में होड़ लगे विधना से तेरी,
लिख-लिख तू ओ तपी, जगा उन्मत्त जमाना,
जिसने ऊँचा शीश किये जग को पहचाना।

तू हिमगिरि से उठा
कुमारी तक लहराया,
रत्नाकर ले आज,
चरण धोने को आया।

उठ ओ युग की अमर साँस, कृति की नव आशा,
उठ ओ यशो विभूति, प्रेरणा की अभिलाषा,
तेरी आँखों सजे विश्व की सीमा-रेखा
अंगुलियों पर रहे, जगत की गति का लेखा।

१९२९

युग-पुरुष से !

●

युग तुम में, तुम युग में कैसे झाँक रहे हो बोलो,
उथल-पुथल तब हो कि समय में अब तुम जीवन घोलो,
तुम कहते हो बलि से पहले अपना हृदय टटोलो,
युग कहता है क्रांति-प्राण ! पहिले बंधन तो खोलो।

तेरी अँगुली हिली, हिल पड़ा
भावोन्मत्त जमाना,
अमर शान्ति ने अमर-
क्रांति-अवतार तुझे पहचाना।

तू कपास के तार-तार में अपनापन जब बोता,
राष्ट्र-हृदय के तार-तार पर वह प्रतिबिम्बित होता।
झोपड़ियों का रुदन बदल देता तू मुसकाहट में,
करती है शृंगार क्रान्ति तेरी इस उलट-पुलट में।

उस-सा उज्ज्वल, उस-सा
गुणमय, लाज बचाने वाला,
है कपास-सा परम मुक्ति का
तेरा ताना-बाना !

अरे गरीब-नवाज़ ! दलित जी उठे, सहारा पाया,
उनकी आँखों से गंगा का सोता बह कर आया।

तू उनमें चल पड़ा राष्ट्र का गौरव पर्व मनाकर,
उन आँखों में बठ गया तू अपनी कुटी बनाकर ।

तुझे मनाने कोटि - कोटि
कण्ठों नें क्या - क्या गाया
जो तुझको पा सका
गरीबों के जी में ही पाया ।

है तरा विश्वास गरीबों का धन-अमर कहानी,
तो है तेरा श्वास, क्रान्ति की प्रलय लहर मस्तानी ।
कंठ भले हों कोटि-कोटि, तेरा स्वर उनमें गूँजा,
हथकड़ियों को पहन राष्ट्र ने पढ़ी क्रान्ति की पूजा ।

बहनों के हाथों जगमग है
प्रलय-दीप की थाली,
और हमारे हाथों है
माँ के गौरव की लाली ।

१९३५

मुक्तक

●

फेंक तराजू रे बलि पंथी,
सिर के कैसे सौदे सट्टे !
बहुत किये मीठे मुँह जग के
अब उठ आज दाँत कर खट्टे ।

:o:

बूढ़े युग के बूढ़े सपने
नन्हें हाथों से दफना दे,
ओ पूरब के प्रलयी पंथी,
उठ चल एक भैरवी गा दे ।

:o:

जो ओठों फड़क उट्ठा, नेत्र छाया
बरस कर गाल पर जो तमतमाया,
पिस उट्ठे दाँत, मुट्ठी बँध उठी, बस
सदा मैंने उसी का गीत गाया ।

चलो सजाओ सैन्य

●

बूढ़ों की क्या बात युगों की तरुणाई के दिन आये हैं,
चट्टानों, खन्दकों, पहाड़ों की खाई के दिन आये हैं।
गंगा माँग रही है मस्तक, जमना माँग रही है सपने,
आज जवानी स्वयं टटोले सिर हथेलियाँ अपने-अपने।
कितने दिन से वृक्ष दे रहे संकेतों झुक आई डाली,
कितने दिन से खड़ा अकेला अपने बागों का यह माली।
आज सिद्ध करना ही होगा नहीं जवाहर कभी अकेला,
आज सिद्ध करना ही है यह आ पहुँची प्रयाण की बेला।
चलो सजाओ सैन्य, समय की भरपाई के दिन आये हैं,
आज प्राण देने के, युग की तरुणाई के दिन आये हैं।

१९६३

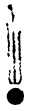

आज चीन को मजा चखा दें

●

भरत खण्ड क्या सुनते हो तुम आज हिमालय की ललकारें,
सदा हथेली पर जो मस्तक रखते वे क्यों टिकुर निहारें?

चलो उठो अब प्रलय-रागिनी गा दें, सागर को दहला दें,
आज चीन को भारत से भिड़ने का थोड़ा मज़ा चखा दें।

हिमगिरि मुकुट कहाता अपना अरे मुकुट पर वार सहोगे,
गंगा जमना माँग रही हैं बलियाँ क्या इन्कार करोगे?

उठो भुजाओं में अर्जुन का रक्त खौलने दो ऐ मानी,
बल की बलि की धाराओं का संगम बन जाओ सेनानी!

१९६२

बहने दो बलि-पंथी धारा

ये हैं हिमगिरि की टेकड़ियाँ, ये हैं गह्वर ये हैं खाई,
यह है नगाधिराज का मस्तक, यह विराटता, यह ऊँचाई।

यह है सिरवालों का सौदा, यह है भुजदंडों का न्यौता,
आज प्रखरतम वार चाहिए, फेंक कतरनी, फेंक सरौता।

क्या मैं उसको माफ करूँगा जो मेरी चोटी से खेले,
जो मेरी सभ्यता, संस्कृति, उदय गान को पीछे ठेले?

आओ आज हिमालय ने निज़ महामौन को तोड़ पुकारा,
रक्त चाहिए, रक्त चाहिए, बहने दो बलि-पंथी धारा।

१९६२

सीमा ढूँढ़ रही

●

सीमा ढूँढ़ रही सिर वाले,
बलि पंथी प्रण से मतवाले,
सीमा ढूँढ़ रही सिर वाले !

:०:

यहीं कहीं डमरू की धुन है,
यहीं कहीं रहते प्रलयंकर,
आज उसी की जीत रहेगी
जो निज कफन सँभाले
सीमा ढूँढ़ रही सिर वाले ।

:०:

अब तो यज्ञ जाग उट्ठा है,
ऐसी समिधा माँग उठ. है,
जो चमके थे सत्तावन में
ले उस से बढ़ भाले ।
सीमा ढूँढ़ रही सिर वाले !

:०:

कौन रहा, हिमवान नहीं तो,
क्या वैभव यदि दान नहीं तो,
मेरी मातृभूमि दुनियाँ में,
क्यों कर सहे कसाले ?
सीमा ढूँढ़ रही सिर वाले !!

१९६२

—:०:—

मेरा है हिमशैल

●

कब किसने कह दिया, बचो, विश्राम लो,
तुम मरने का मूल्य बिगाड़ो, दाम लो !

क्या बोले हिम-शैल, किसे आबाद करे
मिटते मिटते कालिदास को याद करे ?

हरे पत्र हैं, शब्द-शब्द हरिया उट्ठें,
डालें, पीड़ें, टेकड़ियाँ, सब गा उट्ठें।

किसने कहा कि यह सब रैन-बसेरा है,
मेरा है हिमशैल, सदा ही मेरा है !

:o:

यहीं कहीं उस माधव का अलगोजा बोल रहा है रानी !
राधा के पैरों की पायल, यहीं कह रही राम कहानी।

नहा नहा भारत की कविता यहीं अपनपा वार रही है,
सरोवरों के दर्पण लख कर अपना रूप सँवार रही है।

गारे की आँखों से झर पड़ते हैं
यहीं तरलतम मोती।
इसीलिए विधना ने दी है, दीख, दीठ
आशिक की जोती।

यहीं कहीं पार्वतियाँ आतीं
शैल-सरों पर गागर लेकर,
शरमा-शरमा कर शिव से वे
ले जाती हैं अपने घर भर।

वे झुकती हैं पानी भरने
शैल-शिखर झुक-झुक जाते हैं
झूले से झूलते गगन तक
साँस-सँदेसा पहुँचाते हैं।
बेलि और वृक्षों पर बन कर
आकृति कृति का रूप ले रही
दोनों टहनी झुका-झुका, मुख
ऊँचा कर-कर दरस दे रही!

मानों नहा-नहा मानस में
हँसती हैं हंसों की पाँते,
करी किलोले कर-कर कहते
जैसे दिन, वैसी ही रातें।

जल हिलता है सर में,
नयन गोल हिलते-से दिखते उसमें,
पलकें पंख बनी जाती है
नजरें दौड़ रहीं जिस-तिस में।

गीले कुंतल खोल-खोल, वे
बोल-बोल अपनी बोली में,
रोज अलकनन्दा से बातें
करती जातीं हमजोली में।

शैल-शिखर भर इसे न समझो,
गंगा बरस उठी है कण-कण,
यह दैवत् है परम पुरातन
यह शिवशंकर, यह मनमोहन !

यह है मुकुट मातृ-भू तेरा,
तीर्थ-तीर्थ फल रही धरोहर,
यात्री सरबस चढ़ा-चढ़ा कर
इससे पाते जीवन का वर।

सारा देश थिरक जाता है
जब यह शैल करवटें लेता,
भूकम्पों, बाढ़ों, झंझावातों
का वस्त्र सलवटें लेता ।

यहीं कहीं निर्भयता फिरती
इसकी देश-देश को प्यासी,
यहीं यहीं सुन्दरता फिरता
इसके पुण्य चरण की दासी ।

इस पर बर्फ गिरा कि धुआँ-सा
बन बन जाता साँझ - सवेरे,
सूर्य-किरण देती रहती है
चॅवर बनी अंगों पर फेरे ।

धूपें यहीं मनोहारिणियाँ,
छावें यहीं धूप की भाषा,
बनती मिटती रोज सँवरती,
इस पर त्यागों की परिभाषा ।

रोज क्षितिज देखा करता है
इस पर चढ़-चढ़ भू-मण्डल को,
वृक्षों में इसके वैभव को
नदियों में चिर संचित बल को।

यह ऊँचा उठता रहता है,
इसे देखने को शिर उठते,
इसे देख जागृत हो जाते
सपने विधि के बनते मिटते।

धूवें के रेशमी दुशाले
ओढ़े खड़ी शैलवन-टोली,
यहीं कहीं प्रतिभा ने जग में
संध्या - सी सुन्दरता खोली।

झरने खोल रहे हैं झरझर
इसके ओठ, जबान इसी की,
स्मृतियाँ,गतियाँ,कृतियाँ, वृतियाँ
भारत में महमान इसी की।

भारत में इसकी आगी है,
भारत में इसका है पानी,
इसकी ऊँचाई पर गर्वित
संस्कृति की अस्तित्व कहानी।

मेरा पुरुष पुरातन है यह
यह अचला का अचल सलोना,
भारत के आँगन में विकसित
इसका बन-बन, कोना-कोना।

इसका मान-सरोवर मरा,
भारत के अरमान निखरते
उस कैलासधाम पर मेरे
शिवशंकर हर रोज विचरते !

इस पर चलें शस्त्र उस दिन हम
अपना खून सींच देते हैं।
जो ताकत ललचाती उसका
जीवन लड़ उलीच देते हैं !

१९६०

मैं हूँ एक सिपाही !

●

गिनो न मेरी श्वास,
छुए क्यों मुझे विपुल सम्मान,
भूलों के इतिहास,
खरीदे हुए विश्व - ईमान।
अरि - मुंडों का दान,
रक्त-तर्पण भर का अभिमान
लड़ने तक महमान,
एक पूँजी है तीर - कमान !
मुझे भूलने में सुख पाती
जग की काली स्याही
दासों दूर, कठिन सौदा है
मैं हूँ एक सिपाही ! !
क्या वीणा की स्वर - लहरी का.
सुनूँ मधुरतर नाद
छिः मेरी प्रत्यंचा भूले,
अपना यह उन्माद ?
झंकारों का कभी सुना है
भीषण वाद - विवाद ?
क्या तुम को है कुरुक्षेत्र-
हल्दी - घाटी की याद ?

सिर पर प्रलय, नेत्र में मस्ती,
मुट्ठी में मन-चाही,
लक्ष्य मात्र मेरा प्रियतम है,
मैं हूँ एक सिपाही !

खींचो राम-राज्य लाने को
भू - मंडल पर त्रेता,
बनने दो आकाश छेदकर
उसको राष्ट्र-विजेता,
जाने दो, मेरी किस
बूते कठिन परीक्षा लेता,
कोटि-कोटि कंठों जय-जय है
आप कौन है, नेता ?
सेना छिन्न, प्रयत्न खिन्न कर
लाये न्यौत तबाही,
कैसे पूजूँ गुमराही को,
मै हूँ एक सिपाही !

बोल अरे सेनापति मेरे,
मन की घुडी खोल,
जल, थल, नभ, हिल-डुल जाने दं,
तू किंचित मत डोल,
दे हथियार या कि मत दे तू
पर तू कर हुंकार,
ज्ञातों को मत, अज्ञातों को
तू इस बार पुकार,

धीरज, रोग, प्रतीक्षा, चिन्ता,
सपने बनें तबाही ।
कह तैयार द्वार खुलने दे,
मैं हूँ एक सिपाही !!

बदलें रोज बदलियाँ, मत कर
चिन्ता इसकी लेश,
गर्जन - तर्जन रहे, देख--
अपना हरियाला देश
खिलने से पहले टूटेगा
तोड़, बता मत भेद ।
वनमाली अनुशासन की
सूची से अन्तर छेद ।
श्रम-सीकर प्रहार पर जीकर
बना लक्ष्य आराध्य,
मैं हूँ एक सिपाही, बलि है
मेरा अंतिम साध्य !!

रचो बलिपथ सुहाने

●

वाणि, वीणा और वेणी की त्रिवेणी धार बोले,
नृत्य बोले, गीत बोले, मूर्ति बोले, प्यार बोले।

आज हिमगिरि की पुकारों, सिंधु सौ-सौ बार बोले,
आज गंगा की लहर में, प्रलय का व्यापार बोले।

युग-तरुण! तव नेत्र तक, वह नेह का नव-ज्वार आया,
काल की झंकार आई, प्राण का शृंगार आया।

आज सपनों पर न हो, गोरी भुजा काली भुजा,
आज अपनों पर न हो, ढीलो भुजा, खाली भुजा।

अब नरों मे, नारियों में, हो कि बलशाली भुजा,
नाग-सी फुंकारती हों, कोटि मतवाली भुजा।

जाह्नवी की धार बहिना, आज यों बड़भागिनी हो,
और यमुना की लहर गोपाल रूप, सुहागिनी हो!

कोटि शिर ये शिर नही, बलि के अनन्त प्रसाद हैं ये,
और काली के चरण के मधुर, नूपुर नाद है ये।

तीर्थ ये ऊँचे उठायें शिर, गगन से बोल बोले,
साँस लेती लाश को नीचे गिरा, ज़िन्दा टटोले।

फेर बजे वीणा प्रवीणा, फिर भले रँगरेलियाँ हों,
रक्त लेता हो चुनौती, फिर भले अठखेलियाँ हों।

चुम्बनों पर ओंठ क्या उतरें तरुण शिर उतरते हों,
और खतरों ने हमारे कोटि आलिगन वरे हों!

देश के 'शून्यग्र' पर कुरबान हो, उठती जवानी,
देश की मुसकान पर बलिदान 'राजा' और 'रानी'!

हाँ, कमल डोलें, उठे कलियाँ, झरें ये फूल नीचे,
किन्तु प्रतिबिम्बित रहे बल, कोटि बल के आननों में।

रंग करती सी मृदंग बजे, कि वंशी रंध्र बोलें,
नृत्य मग्ना एशिया की गोपियाँ, स्वच्छन्द डोलें!

अमित मधु आकर्षणों का ज्वार हरि वंशी बजावे,
स्वर भरे कश्मीर उसमे, भैरवी नेपाल गावे।

मोह ले मन को हमारे नेह का गांधार प्रहरी,
और लंका से हमारी सिंधु-सी हो प्रीत गहरी।

आज ब्रह्मा के स्वरों में, एशिया के द्वार हर्षित,
मित्र के उल्लास हर्षित शत्रु के संहार हर्षित।

देख 'जन-गण-मन' कलंकित कर न दे आकाशवाणी,
क्यों सहे विजयी तिरंगा विश्व-शोषण की कहानी?

चरण तल में भूमि ठहरी, शीष पर भगवान ठहरा,
एक अंगुली के इशारे, अखिल हिन्दुस्तान ठहरा।

बेच मत देना जवानी, बेच मत देना इशारे,
बेच मत देना किसी को, ऐ सुधी, सपने हमारे।

विश्व की हाटों हमारे प्राण का नीलाम मत हो,
और 'उनके' स्वार्थ पर जग में कठिन संग्राम मत हो।

रक्त से मीठे सलोने आज श्रम सीकर न जाने,
लो उठो, गाओ, घिरो, छाओ, रचो बलि-पथ सुहाने!

'गणतन्त्रदिवस' : १९५४

चले समर्पण आगे-आगे

●

यों मर-मर मत करो आम्र वन गरवीले युग बीत न जाए,
रहने दो वसन्त को बन्दी, कोकिल के स्वर रीत न जाएँ।
उठीं एशिया की गूजरियाँ, मोहन के व्रत, मोहन मे रत,
दानव का बल बढ न जाय, वे इस घर से भयभीत न जाएँ।
लो इस बार सुलग उट्ठी है ज्वाला हिम के वरदानो पर,
सँभल-सँभल सपने लिख गाफिल, गलती हिम की चट्टानो पर।
गंगा, यमुना, सिधु, ब्रह्मपुत्रा का वैभव देने वाला,
वही नगाधिप आज हो रहा, भीख प्राण की लेनेवाला।
वे कश्मीरी कस्तूरी के मृग भागे-भागे फिरते है,
केसर के सुहाग खेतों मे अरि के अगारे घिरते हे।
आज वितस्ता के पानी मे लग न उठे आगी लो धाओ,
गर्व न करो उच्च शिखरों का केसरिया बन उन्हे बचाओ।
गंगा के पानी से मीठा हो शिर-दान-नगर का पानी,
कथाकली से पहले होवे, शिव के ताण्डव की अगवानी!
मोहन के स्वर, मोहन के व्रत, मोहन का वृन्दावन जागे,
सिद्धि दासियाँ पीछे-पीछे, चले समर्पण आगे-आगे।

१९५३

●

प्यारे भारत देश

●

प्यारे भारत देश !

गगन गगन तेरा यश फहरा,
पवन पवन तेरा बल गहरा,
क्षिति जल नभ पर डाल हिंडोले,
चरण-चरण संचरण सुनहरा,
ओ ऋषियो के त्वेष !
प्यारे भारत देश ! !

वेदों से बलिदानों तक जो होड लगी,
प्रथम प्रभात किरण से हिम मे जोत जगी,
उतर पडी गगा खेतो खलिहानों तक,
मानो आँसू आये बलि-महमानों तक,
सुख कर जग के क्लेश !
प्यारे भारत देश ! !

तेरे पर्वत शिखर कि नभ को भू के मौन इशारे,
तेरे वन जग उठे पवन से हरित इरादे प्यारे,
रामकृष्ण के लीलालय में उठे बुद्ध की वाणी,
काबा से कैलास तलक उमड़ी कविता कल्याणी;
बातें करे दिनेश !
प्यारे भारत देश ! !

जपी, तपी, संन्यासी, कर्षक, कृष्ण रंग में डूबे,
हम सब एक, अनेक रूप में, क्या उभरे क्या डूबे,
सजग एशिया की सीमा में रहता खेद नहीं,
काले गोरे रंग बिरंगे हम में भेद नहीं;
श्रम के भाग्य निवेश !
प्यारे भारत देश !!

वह बज उठी बाँसुरी यमुना तट से धीरे धीरे,
उठ आई यह भरत मेदिनी, शीतल मंद समीरे,
बोल रहा इतिहास, देश सोये रहस्य है खोल रहा,
जय प्रयत्न जिन पर आन्दोलित जग हँस-हँस
जय बोल रहा;
जय जय अमित अशेष !
प्यारे भारत देश !!

मरण-ज्वार

प्रहारक, बाण हो कि हो बात
चीज़ क्या, आर-पार जो न हो,
दान क्या, भिखमंगों के स्वर्ग
प्राण तक तू उदार जो न हो।

फेंक वह जीत, या कि वह हार
मिला बलि में प्रहार जो न हो,
चुनौती किसे और किस भाँति
कि अरि के कर कुठार जो न हो।

हार क्या कलियों का जी छेद
बिंधा उनमें दुलार जो न हो,
प्यार क्या खतरों का झूलना
झूलना बना प्यार जो न हो!

फेंक बंधन, कि वार पर वार
मधुर स्वर क्यों सितार जो न हो
रखे लज्जा क्यों संत, कपास
पेर कर तार तार जो न हो?

दिखे हरियाली कि मेघ श्याम
कृषक चरणोपहार जो न हो,
शूलियाँ बनें प्रश्न के चिह्न
देश का चढ़ा प्यार जो न हो।

तुम्हारे मेरे बीचों बीच
प्रणय का, बँधा तार जो न हो,
अरे हो जाय रुधिर बेस्वाद
लाड़ला मरण-ज्वार जो न हो!

१९३५

सिपाहिनी

●

चूड़ियाँ बहुत हुईं कलाइयों पर
प्यारे, भुज-दंड सजा दो,
तीर कमानों से सिंगार,
जरा जिरह-बख़्तर पहना दो।

जी मे सोये से सुहाग जग
उठो, पुतलियों पर आ जाओ,
बिना तीसरे नेत्र, दृष्टि में
अजी, प्रलय-ज्वाला सुलगा दो।

कैसे सैनानी हो, जो मैं
नही सैनिका होने पाती,
कैसे बल हो, अबलापन को
जो मैं नहीं डुबोने पाती ?

आदि पुरुष ने, अपनी माया
के हाथों मे कौशल सौंपा,
जग के उथल-पुथल कर देने
के मस्ताने बल को सौपा।

मेरे प्रणय और प्राणों के
ओ सिंदूर-रक्तिमा लाली,
तुम कैसे प्रलयंकर शंकर जो,
मै रहूँ न दुर्गा, काली ?

अर्धरात्रि के सूनेपन में,
प्यारे बंसी बना बजा लो
मेरी धुन में अपनी साँसे,
गूँथ-गूँथ स्वर हार बना लो।
अँगुलियों से गिन गिन मोहन,
मेरे दोषों को दुहरा लो,
ओठों से ओठों पर, अपना,
प्रणय-मन्त्र लिख स्वर गहरा लो!

किन्तु सुनहली सूरज किरनों,
पर, क्या यह संवाद लिखोगे ?
सखे खनकती करवालों पर,
चुड़ियों के सम्वाद लिखोगे।

माना, जौहर भी होता था,
मरने के त्योहारों वाला,
और पतन के अगम सिधु से,
तरने के त्योहारों वाला।

किन्तु आज तो इस मुरली को
रण भेरी का डंका कर लो,
या कर लो पानी वाली
तलवार, उदार मार लो मर लो।

जौहर से बढ़कर घोड़े पर
चढ़कर, जौहर दिखलाने दो,
चुड़ियाँ हो सुहागिनी यौवन,
यौवन अपनी पर आने दो।

●

गांधी : विनोबा

●

वह कल्पना दौड़ आई, वह भावना उतर आई,
ढूँढ़ रही है गगन देश में, निधि जो उस दिन खो आई।

क्या मारेगी तुम्हें किसी घातक की गोली बेपरवाह,
उठी, भक्ति ने मुक्त गगन का मूल्य चुकाया, बोली वाह!

यमुना की लहरें उस दिन सौराष्ट्र, द्वारका, क्या बोलीं,
इच्छा ने, हाहाकारों की उठी और थैली खोली।

गर्वित था इतिहास भूमि पर, युद्ध न होंगे, श्रम होगा,
लड़ने वालों के लाले पड़ जायेंगे, संयम होगा।

इस शरीर का मोह न होगा, वाणी का छल रीतेगा,
बीतेगा, दुर्भाग्य तुम्हारा ज़ोर यहीं पर बीतेगा।

श्रद्धा ले बलिदान साथ में, घूमेगी, बल खायेगी,
आज समर्पण की सब निधियाँ उतरेंगी, छबि छायेगी।

यमुना, गंगा और नर्मदा ब्रह्म-पुत्र का बल होगा,
कृष्णा, कावेरी, महानदी लहरायेगी, छल छल होगा।

:०:

वह विनोबा घूमता है विश्व पर चुपचाप,
आज बापू की चरण-ध्वनि याद आती है।

इस तरह पद-पद तुम्हारे दौड़ते से पाँव,
भूमि है, कुछ इस तरह से घूम जाती है।

प्रार्थना यों डोलती है, बोलती है बोल,
भुजाएँ, ये गर्विताएँ रहीं वेणी खोल।

मधुर यमुना के स्वरों में वेणु का सन्देश,
सुन रहा है विश्व कर कर ज्वार का अभिषेक।
आज हिमनग से कुमारी तक तुम्हारा ढंग,
बढ़ रहा है, गढ़ रहा है, क्रान्ति के सौ रंग।

वह तुम्हीं हो, जहाँ जाकर कोटि शिर बन एक,
व्यक्त करते विश्व पर अपने हृदय की टेक।
अनकहे से कह रहे है व्यस्त कृति के साथ,
परम लघु होकर विशाल क्रिया कलापी हाथ।

ढूँढ़ता है बाजुएँ भू से गगन तक मौन,
शक्ति का उपहास करता सा खड़ा यह कौन?
शब्दकोषों के कथन ने आज मानी हार,
अमर संज्ञाहीन की संज्ञा हुई साकार।

वह सुकृति है, वह समर्पण है, वही है त्याग,
ढूँढ़ता दुखिया जनों को बावला अनुराग।
पाँव चलते, शीश चलता, चल रही वसुधा,
आज किसकी शक्ति पर अनुरक्त है वसुधा।

राजघाट निहाल उस पर बावला उन्माद,
चल रहा संकल्प पढते, आ रही कुछ याद।
विमल कृतियाँ सजग, सबसे और सबसे भिन्न,
आज जीवन बलि चढा कर गढ़ रहा पद-चिह्न।

:०:

गोद हैं अभिमानिनी, माता बना है राष्ट्र,
एक तुमको जन्म दे, जीवित हुआ सौराष्ट्र।

मातृ-मन्दिर में हृदय के सौ इरादे खोल,
पंखिनी के स्वर, दिवंगिनि बोलती नव बोल।

राजनीतिक चाल के फीके पड़े हैं दाँव,
धन्य तेरी भुजा, मस्तक, धन्य तेरे पाँव।

धुल गईं चालाकियाँ, मिट गया उनका ढंग,
विश्व तेरे बोल बोले, खूब आया रंग।

द्वारका में जन्म ले, साबरमती में वास,
किये सेवाग्राम जमनालाल का आबाद।

बोल नोवाखालियों से प्रार्थना के बोल,
राजघाट बसा रही है अब तुम्हारी याद।

अहह पागल विश्व प्रतिदिन, प्रति समय ले हर्ष,
चढ रहा है पुष्प ये बढ़ रहे भारतवर्ष।

मिलन मानव मानवी का, प्रणय का वरदान,
गा रही है खादियाँ ऋषि वल्कलो के गान।

गाँव मे, गोसार मे, घर मे कि उर मे रोक,
आज श्रम पर उतरता आता स्वयं गोलोक।

शिखर को, जलधार को, स्वर को शिला में घोल,
अब पसीना है बढ़ाता, माटियों का मोल।

वेद के संकल्प, अपनी भुजा के वरदान,
ऊग आये भूमि में उपनिषद के अहसान।

विहँस नदियों के कछारों उमडता सन्देश,
देखता संकल्प में बापू तुम्हारा वेश!

बागुड़ों, हरियालियों पर भूल अपने दाँव,
कर्म के सन्देश से विकसित हुए हैं गाँव।

सजग जीवन मरण वृत पर है तुम्हारा वास,
आज नदियों की लहर को लग उठी है प्यास!

वृक्ष की छाया बना लहरा रहा विश्वास,
ऊग आये फल रसा में, उमड़ आया घास।

गाय के दूधों नहातीं अँतड़ियाँ क्षण भूल,
खेलते बछड़े, उमड़ते शिशु, धरा के फूल।

बौर आये, मुक्त भरत-वसुन्धरा के प्राण,
बो दिये थे, छा दिये थे, तुम्हीं ने ये गान।

चाँदियाँ बेहाल, सोना हो रहा कंगाल,
आज फौलादी भुजा पर समय मालामाल।

परस दो, तुम दरस दो, उतरो धरा पर प्राण,
लौट आवें हिमशिखर तक लाड़ले बलिदान।

मुक्त भारत-भू निरख कर, लख इरादे पूर्ण,
यह चढ़ाता है गगन निज चाँदनी का चूर्ण।

बँध गए भुजबन्ध अपने, जल उठी है गंध,
कहो अब परिवार सा बन जाय राज-प्रबन्ध!

कौन देखता है सीमा पर हम बाँकों का ज़ोर,
प्राण से रक्षित रहेंगे मातृ-भू के छोर।

हिमशिखर पर जहाँ माया से मिले ये ब्रह्म,
निम्नगा पर नहीं कल-कल नाद की सौगात।

वादियों पर, जहाँ मेरे डोलते संकल्प,
थकी रातें, मधुर बातें, खेलते जलजात।

बिखरती निशिगंध से पूछो प्रणय का मोल,
फैलता आकाश कह देगा हमारे गान।

स्वयं उठती हैं भुजाएँ गगन तक, क्या शेष,
दौड़, जाग्रति, श्रम, समर्पण, बस यही पहचान।

१२-१२-५९

हाजिर प्राण हमारा !

●

सनन-सनन बह रही हवा-सी, तेवर-सी गतिविधियाँ,
नभ पर नहीं, भूमि पर ग्वालिन ! तू समेट ले निधियाँ।

उपमाएँ गरीब हो आईं, अलंकार है फीके,
दोनों तट वीरान दिख रहे अपनी साँस-नदी के।

सिर चढ़ चढ़ पानी-सा बरसे कहले राम-कहानी,
हरियाली देखे दुनियाँ पर उसकी आनी-जानी।

सिर देनेवालों के सिर पर कलगी-सधा मुकुट है,
यह ईमान देश का अभिमत, हरि-मंदिर का घट है।

किरणें इस पर रूप चढाती, चाँदनियाँ नहलाती,
नजरों पर दुनियाँ की दौड़ नये शृंगार सजाती।

यहाँ खुदा घनश्याम हृदय पर, यहाँ बसा श्रीराम,
तीर्थ कर कह गये यही पर उठ कर करो प्रणाम।

फिर क्या ? फिर मत कर ओ ज़ालिम किसके
घर 'फिर' होगा,
वहीं उठेगा वृषभ-स्कंध पर, प्राणों के सिर होगा।

तू न बकरियों सा 'मैं' 'मैं' कर, बो दे निज तरुणाई,
हिम शैलों, पर्वत शिखरों ने तुझको टेर लगाई।

आज देश घातक ने सोचा तू होगा बदनाम,
करूँ देश का, तरुणाई का क्षण में काम तमाम।

उसे पता क्या दीप दीप से जलता है, मेरे घर,
कोटि कोटि में आग धधकती उठने का स्वर लेकर।

तेरी नज़रों पर ठहरे, सारा उन्मत्त ज़माना,
तेरी भाव-भंगिमा पर सपना पड़ जाय पुराना।

रहे जवाहर नही अकेला, शिर न झुके राष्ट्रेन्द्र,
कृष्णा, गोदावरी बह रही बना बना जलकेन्द्र।

आज गालियों, और गोलियों ने हमको ललकारा,
देखेगा उन्मत्त जमाना, हाज़िर प्राण हमारा।

नन्हे लेखक, तेरी तड़पन, तेरी आँख-मिचौनी,
सूरज की नवीन किरणों मे पडे नही छवि बौनी।

कहाँ प्रतिज्ञा, मधुर उन्नयन, सिर देना चुपचाप,
छन्दों के वृन्दों से सीमा बाँधो अपने आप।

वह भूचाल जाग आया है, मगन गगन झुक आया,
आज हिमालय ही अन्तर की पुतली पर मँडराया।

उपमा पर, रूपक पर क्या, बलिदानों में शिर दे-दे,
आँसू आज उसाँसों मे गंगा की धार पिरोदे।

रौंद झेलता हिमगिरि का शिर, हुई अनाथन गंगा,
देश निकाला-सा डोले मेरा प्रियतम अधनंगा।

जब जब चढ़ चढ़ जाये हिम पर तेरा मस्त शरीर,
जब जब तुझे दिखे वह ग्वाला जमनाजी के तीर।

तब तब उससे माँग सलौने प्राणों का दे देना,
यमुना के स्वर रहे गूँजता अपना श्याम सलौना।

८-७-६०